RECENT RESEARCHES in
SOCIAL SCIENCES & HUMANITIES

Issue : 1, Year : 4
Apr.-May-Jun. (2017), Pages : 69 - 73
ISSN 2348 – 3318

International Refereed & Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary Research Journal

संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय चेतना की परम्परा

कमलेश कुमार मिश्र
प्रवक्ता, रा0इ0का0 दिउसी,
विकास क्षेत्र कल्जीखाल, पौड़ी गढ़वाल,
उत्तराखण्ड

Received : 25/02/2017 *1st BPR* : 28/02/2017 *2nd BPR* : 10/03/2017 *Accepted* : 18/03/2017

ABSTRACT

चेतना में आत्म सम्मान एवं गौरव का विषय राष्ट्र होता है, राष्ट्रीय चेतना में राष्ट्र के लिए कार्य किया जाता है। राष्ट्रीय चेतना व्यक्तिगत स्वार्थ से रहित होती है, और सदैव प्रशंसनीय बनी रहती है। आन्तरिक कलह व द्वेष से पीड़ित देशों को कितनी ही बार राष्ट्रवाद ने एक झण्डे के नीचे लाकर खडा कर दिया है। राष्ट्रीय संकट के समय राष्ट्र प्रेम ने कितनी ही बार देश के सभी नागरिको को कंधे से कन्धा मिलाकर चलने को प्रेरित किया है, राष्ट्रवाद से प्रेरित होकर त्याग एवं वीरता के जो कार्य किये गये हैं, उसमें सभी देशों के इतिहास के पन्ने भरे पडे हैं। राष्ट्रीय चेतना के कारण शासन व्यवस्था का पालन लोग स्वतः ही करते हैं। राष्ट्रीय चेतना देश प्रेम की भावना जगाकर नागरिकता को सजीव रूप प्रदान करती है। यह प्रत्येक व्यक्ति में आत्म सम्मान एवं गौरव की भावना भरता है। संकट काल में इसी भावना से राष्ट्र एक हो जाता है। राष्ट्रवाद ने साम्राज्यवाद को खत्म करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्राचीन संस्कृत साहित्य के अतिरिक्त अर्वाचीन संस्कृत साहित्य की एक लम्बी परम्परा है जिसमें राष्ट्रीय चेतना के साथ–साथ, अपने मनोमस्तिष्क में राज्य–कल्याण की भावना मिलती है।

विश्व में राष्ट्रवाद आज एक प्रभावी शक्ति है, आखिर राष्ट्र क्या है? लोग राष्ट्रों का निर्माण क्यों करते हैं, और राष्ट्र क्या करने की तीव्र इच्छा जगाते हैं? लोग अपने राष्ट्र के खातिर प्राण न्यौछावर करने के लिए क्यों तत्पर रहते हैं?

राजनैतिक चिन्तक ई0 बार्कर के अनुसार राष्ट्र उन लोगों का समूह है जो किसी निश्चित प्रदेश में वास करते हैं, जो सामान्यतः भिन्न नस्लों के होते हैं, लेकिन साझे इतिहास के दौर में अर्जित व सम्प्रेषित विचारों व भावनाओं की साझी विरासत रखते हैं, जो समग्र रूप में तथा अतीत की अपेक्षा वर्तमान में अधिक साझी धार्मिक आस्था भी शामिल करते हैं, जो सामान्यतः एक परिपाटी के रूप में विचारों एवं भावो में प्रेरित करने हेतु साझी भाषा का प्रयोग करते हैं, जो साझी इच्छा को बनाये रखते हैं, तथा तद्नुसार उस इच्छा की अभिव्यक्ति के लिए एक पृथक राज्य बनाने का प्रयास करते हैं।

वर्गेस ने राष्ट्र को परिभाषित करते हुए लिखा है ''राष्ट्र जातीय एकता के सूत्र में बंधी हुई वह जनता है, जो अखण्ड भौगौलिक प्रदेश में निवास करती है''

ब्राइस के अनुसार '' राष्ट्र एक राष्ट्रीयता है जिसने अपना संगठन एक राजनैतिक संस्था के रूप में कर लिया है, और जो स्वाधीन हो अथवा स्वाधीनता की इच्छुक हो।[1]

डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल के शब्दो में–भूमि, भूमिवासी जन और जनसंस्कृति –तीनों के सम्मिलन से राष्ट्र का स्वरूप बनता है। भूमि अथवा भौगौलिक एकता जन अर्थात जन गण की राजनैतिक एकता और जन संस्कृति अर्थात सांस्कृतिक एकता तीनों के समन्वय का नाम राष्ट्र है।

डॉ0 रामविलास शर्मा के अनुसार राष्ट्र का सीधा सम्बन्ध जन गण से है–वैदिक काल से जनपद उन जनो के निवास थे, जो रक्त सम्बन्ध के आधार पर सम्बद्ध थे, बाद में पूंजीवाद के आगमन से जाति तदुपरान्त लघु जाति और महाजाति का विकास हुआ।[2]

''राष्ट्र'' अंग्रेजी शब्द नेशन का हिन्दी रूपान्तरण है, नेशन शब्द की उत्पति नेशिया नामक लैटिन शब्द से हुई है। लैटिन शब्द नेशिया का अर्थ जन्म लेना या पैदा होना होता है। व्यक्तियों के दृष्टिकोण से राष्ट्र का सम्बन्ध एक जाति या नस्ल से है जाति का अर्थ वैसे व्यक्तियो के समूह से है, जो परस्पर वंश या नस्ल के हों, जब ऐसा समूह राजनैतिक संगठन का रूप धारण कर लेता है तो उसे राष्ट्र कहते हैं।

राष्ट्रीय चेतना में आत्म सम्मान एवं गौरव का विषय राष्ट्र होता है ,राष्ट्रीय चेतना में राष्ट्र के लिए कार्य किया जाता है। राष्ट्रीय चेतना व्यक्तिगत स्वार्थ से रहित होती है, और सदैव प्रशंसनीय बनी रहती है।

चेतना चैतन्यता की स्थायी अवस्था है, सिद्धान्ततः राष्ट्रवाद एक वांछनीय धारणा है सामाजिक एकता बढाने की दृष्टि से देखें

RECENT RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES & HUMANITIES
Issue : 1, Year : 4, Apr.-May-Jun. (2017), Pages : 69-73 , ISSN 2348 – 3318
कमलेश कुमार मिश्र
International Refereed & Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary Research Journal

तो राष्ट्रवाद के समान अन्य कोई भावना किसी देश को एकता में नही बांध सकती है। आन्तरिक कलह व द्वेष से पीड़ित देशों को कितनी ही बार राष्ट्रवाद ने एक झण्डे के नीचे लाकर खडा कर दिया है। राष्ट्रीय संकट के समय राष्ट्र प्रेम ने कितनी ही बार देश के सभी नागरिको को कंधे से कन्धा मिलाकर चलने को प्रेरित किया है, राष्ट्रवाद से प्रेरित होकर त्याग एवं वीरता के जो कार्य किये गये हैं, उसमें सभी देशों के इतिहास के पन्ने भरे पडे हैं। राष्ट्रीय चेतना के कारण शासन व्यवस्था का पालन लोग स्वतः ही करते हैं।

राष्ट्रीय चेतना देश प्रेम की भावना जगाकर नागरिकता को सजीव रूप प्रदान करती है। यह प्रत्येक व्यक्ति में आत्म सम्मान एवं गौरव की भावना भरता है। संकट काल में इसी भावना से राष्ट्र एक हो जाता है। राष्ट्रवाद ने साम्राज्यवाद को खत्म करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।[3]

राष्ट्रीय चेतना विश्व के समस्त राष्ट्रों के विकास की प्रतिस्पर्धा में उत्प्रेरक का कार्य करती है। राष्ट्रीय चेतना में आत्मगौरव एवं स्वाभिमान का विषय राष्ट्र होता है।

संस्कृत साहित्य अपनी उत्कृष्ठता के लिए भारतवर्ष ही नही अपितु सम्पूर्ण विश्व में विख्यात है। भास, कालिदास, भवभूति, भारवि माघ, भट्टि श्रीहर्ष, सुबन्धु, दण्डी, बाणभट्ट, धनपाल आदि संस्कृत साहित्यकारों की साहित्यिक सम्पदा को प्रत्येक देश के संवेदनशील मनीषियों ने मान्यता प्रदान की है। हमारे भारत वर्ष में तो इनकी काव्य कला की कमनीयता को आज भी सभी निष्पक्ष विद्वान एक स्वर में महनीय एवं स्पृहणीय मानते भी हैं। भास, कालिदास आदि संस्कृत के पुरातन साहित्यकारों की कृतियों में असीमित साहित्यिक सौन्दर्य के साथ ही साथ भारतीय संस्कृति, सभ्यता, जीवन दर्शन, राष्ट्रीय भावना आदि भारतीय समाजोपयोगी सभी तत्वों पर तथ्यपूर्ण प्रकाश डाला गया है। फलस्वरूप यह साहित्य भारतीय राष्ट्र और भारतीय समाज के लिये सदैव मूल्यवान रहेगा।

प्राचीन संस्कृत साहित्य का स्वाध्याय करते समय हमारे मस्तिष्क में यह तथ्य भी बड़ी तीव्रता से उदित हुआ है, कि हमारे प्राचीन संस्कृत साहित्यकारों में भी अनेक ऐसे साहित्यकार हुये हैं, जिनकी रचनाओं में राष्ट्रीय भावना का सुरीला स्वर सुनाई देता है। इन साहित्यकारों में भास, कालिदास, विशाखदत्त, भवभूति, मुरारि, अनन्तभट्ट, क्षेमेन्द्र, श्रीहर्ष, भट्टि, विद्यापति, नयचंदसूरी,माधव, चन्द्रशेखर वेंकटाध्वरि,देवराज शर्मा और देवराज शास्त्री आदि प्रमुख हैं।[4]

संस्कृत साहित्यकारों में रूपककार भास भी एक दैदीप्यमान नक्षत्र के रूप में प्रदीप्त हैं। यद्यपि इनके रूपकों में लोकानुरंजन रूपकों की प्रधानता है, तथापि इनके अनेक रूपकों में भारतीय संस्कृति, शील और शक्ति के भी स्वाभिमान परक वर्णन मिलते हैं। इनके रूपकों में युद्धभूमि पर मारे जाने पर स्वर्ग प्राप्ति तथा विजयी होने पर यशोलाभ की तथ्यात्मक बात कहकर भारतीय वीरों की सार्थक निर्भीकता प्रकट की गई है।

भारतीय क्षत्रियों की समृद्धि को सायकाधीन बताया गया है तथा स्वाभिमान को ही भारतीय राजाओं का शरीर कहा गया है।

भास के अधिसंख्यक रूपकों के भरतवाक्यों में तो भासनिष्ठ राष्ट्रीय भावना खुलकर सामने आ गई है। इसमें हिमालय से लेकर सागरपर्यन्त अपनी वसुन्धरा के एकातपत्र शासन की कामनाऐं की गई हैं, सभी प्रजाओं में सम्पत्तियों के निवास और विपत्तियों के विनाश की इच्छाऐं की गई हैं और अपने देश के शत्रुओं का दमन चाहा गया है।

इमां सागरपर्यन्तां हिम वद्धिन्ध्य कुण्डलाम्।
महीमेकातपत्रांक राजसिहः प्रशास्तु नः।। दूतवाक्यम् (1/56)

सर्वत्र सम्पदः सन्तु नाश्चन्तु विपदः सदा।
राज गुणोपेतो भूमिमेकः प्रशास्तु नः।। कर्मभारम् 1/25 का भरतवाक्य

हस्ति सर्वे प्रसन्नाः स्मः प्रवृद्वकुलसंग्रहाः।
इमामपि महीं कृत्सनां राजसिंह प्रशास्तु नः।। पंचरात्रम् 3/26 का भरतवाक्य

भवन्त्वरजसो गावः पाश्चकं प्रशाम्यतु।
इमामपि महीं कृत्स्नां राजसिहः प्रशास्तु नः।। अभिषेकनाट्कम 6/35

महाकवि कालिदास ने रघुवंश, कुमारसम्भव, मेघदूतं तथा ऋतुसंहार नामक चार श्रव्यकाव्यों की और अभिज्ञानशाकुन्तलम्, विक्रमोवर्षीय तथा मालविकाग्निमित्र नामक तीन दृश्य काव्यों की सर्जना की है। कालिदास के काव्यों में भारत और भारतीयता के दर्शन होते हैं। आपको भारतभूमि के कण–कण से प्यार था, आप उसके चप्पे चप्पे से परिचित थे, और उसकी प्राणिमात्रोपयोगी विविध सम्पदाओ के प्रति उनके मन में कृतज्ञतापूर्ण आत्मीयताओं के भव्यभाव भरे हुए हैं। इन्दुमति के स्वयंवर के अवसर पर भी सुनन्दा के द्वारा राजा का परिचय देने के माध्यम से उन्होंने मगध, अंग, अवन्ति, महिष्पति, मथुरा, कलिंग, पाण्ड्य तथा कौशल नाम से विख्यात भारतीय भू–भागों का बड़े ही अभिनिवेश के साथ वर्णन किया है।[5]

दिलीप, रघु, अज, दशरथ राम आदि नरेशों द्वारा किये गये राष्ट्र शौर्यवर्धक क्रियाकलापों को कालिदास ने अपने काव्य में

RECENT RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES & HUMANITIES
Issue : 1, Year : 4, Apr.-May-Jun. (2017), Pages : 69-73 , ISSN 2348 – 3318
कमलेश कुमार मिश्र
International Refereed & Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary Research Journal

अतीव महत्व दिया है, उनकी यह भी हार्दिक अभिलाषा रही है कि यहां के राजा लोग प्रजा का योग क्षेम करते रहे और यहां संस्कृत भाषा जो इस राष्ट्र की अपनी भाषा है, की सदा उन्नति होती रहे।

कालिदास के मनोमस्तिष्क में भारतीय संस्कृति के प्रति अगाध आदर, विश्वास और स्वाभिमान की भावना भरी हुयी थी। यही कारण है कि उनके काव्यों में भारतीय संस्कृति की समुज्ज्वल छटा छिटकती हुई लोचर–गोचर होती है। त्याग, तपस्या और तपोवन जो भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग हैं का इनके काव्यों में अतीव मनोरम वर्णन उपलब्ध होता है।

विशाखदत्त्त प्रणीत मुद्राराक्षसम् में चाणक्य और राक्षस नामक कूटनीतिपूर्ण अमात्यो की राजनिष्ठात्मक गतिविधियों का चित्रण है। इसमें चाणक्य को सफलता तथा राक्षस को विफलता मिलती है। चाणक्य प्रजा की सुख, समृद्धि और राष्ट्र उत्थान के लिए राक्षस को चन्द्रगुप्त मौर्य का प्रधान अमात्य बनाना चाहता है, जिसमें उसे अंततः सफलता मिलती है ।

महाकवि भट्टि द्वारा प्रणीत तथा रामकथा से सम्बन्धित भट्टिकाव्य में यत्र–तत्र राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति हुई है। इस महाकाव्य में आर्य संस्कृति के प्रतीक राम एवं अनार्य संस्कृति के प्रतीक एवं संरक्षक रावण के साथ व्यक्तिगत युद्ध होने के बावजूद राष्ट्रीय स्तर पर युद्ध वर्णित किया गया है। युद्ध के दिनो में कुंभकर्ण आदि अपने स्वजनो के वध से संतप्त रावण का अन्तर्द्वन्द भी तनिष्ठ स्वराष्ट्राभिमान से ही युक्त है। महाकाव्य के अन्तिम बाईसवें सर्ग में महाकवि ने अयोध्यापर्यन्त दक्षिण भारत के भू भागों का जिस सोल्लासपूर्वक वर्णन किया है, वह निश्चित ही कविनिष्ठ देशप्रेम का प्रतीक है।[6]

भवभूति की काव्यमयी भव्य भावनाओं एवं कलात्मक कल्पनाओं से संस्कृत जगत का समीक्षक भली–भांति परिचित है आदिकवि बाल्मीकि की ही भांति भवभूति को भी अपने आर्यदेश तथा आर्यसंस्कृति एवं सभ्यता के प्रति आस्था है। यहां के वैदिक धर्म का उल्लेख वे बडे ही गर्व से करते हैं, और आर्यधर्म के विध्वंसको के विध्वंस को बडे रोचक रीति से प्रस्तुत करते हैं। भवभूति की कार्यसम्पदा में राष्ट्रीय चेतना का पुट है। किन्तु इसके बावजूद वे समस्त संसार का कल्याण चाहते हैं।

सात अंको के नाटक अनर्घराघवम् के रचयिता श्री मुरारि कवि हैं। इस नाटक में ताड़कावध से लेकर रावण वध राम के राज्याभिषेक की कथा को रूपकायित किया गया है, भवभूति के महावीर चरित की तरह यहां भी राष्ट्रीय चेतना के तत्व विद्यमान हैं। विश्वामित्र दशरथ संवाद के प्रसंग में नाटककार का यह कहना है कि राजा के पुत्र का वास्तविक उपयोग तो राष्ट्र की प्रजा के हित के लिए किया जाता है, मुरारि कृत इस नाटक के नायक राम तथा सहनायक लक्ष्मण अपने राष्ट्र विरोधी इन समस्त राक्षसों का संहार करने के लिए ही विश्वमित्र द्वारा दीक्षित किये गये हैं। नाटककार ने माल्यवान और सुकसारण नामक दो गुप्तचरों के वार्तालाप से यह तथ्य स्पष्ट कर दिया है कि राम– रावण का संग्राम सिद्धान्ततः दो प्रजातियों का तथा दो संस्कृतियों का संग्राम है।

ग्यारहवीं शताब्दी के कवि श्री अनन्तभट्टकृत चम्पूभारतम् में पाण्डवों के जीवन चरित्र का बारह स्तबकों में बडा ही सरस वर्णन किया गया है, यद्यपि इसमें प्रत्यक्ष रूप से राष्ट्रीय भावों पर प्रकाश नहीं डाला गया है। तथापि प्रजापालन भारतीय भू भाग वर्णन पाण्डवीय राज्य की सार्वभौमिकता तथा साम्राज्य सीमा के वर्णन के प्रसंगो में पाठकों का अप्रत्यक्ष रूप से कविनिष्ठ राष्ट्रीय चेतना की भावना का अनुभव होगा।

महाकवि क्षेमेन्द्र के काव्य सागर में रामायण मंजरी तथा भरत मंजरी नामक दो काव्य मुक्ताऐं ऐसी हैं, जिन पर राष्ट्रीयता की आभा झलकती है, उनकी रामायण मंजरी में 6400 तथा भरत मंजरी में 10548 पद्य उपलब्ध होते हैं। अतः महाभारत व रामायण की तरह राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति क्षेमेन्द्र की इन कृतियों में भी देखने को मिलती है।[7]

नैषधीयचरित्रकार महाकवि श्रीहर्ष की वैदग्ध्यपूर्ण काव्यसर्जना सें संस्कृत साहित्य के समीक्षक सुपरिचित हैं। कतिपय स्थलों पर महाकविनिष्ठ स्वराष्ट्रप्रेम की भी क्षीण छवि देखने को मिलती है। दमयन्ती स्वयंवर में सभी के द्वारा इन्द्र को वरण किये जाने के प्रस्ताव को दमयन्ती यह कहकर अस्वीकार कर देती है कि स्वर्ग लोक से भारतवर्ष में रहना श्रेयस्कर है सत्पुरूषो ने भारतवर्ष को सर्वश्रेष्ठ देश बताया है। जिस प्रकार आश्रमों में सर्वश्रेष्ठ गृहस्थाश्रम है, उसी प्रकार सभी देशों में भारत देश सर्वश्रेष्ठ है, यह स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है।

इस प्रकरण में दमयन्ती के माध्यम से अपने भारत देश की प्रशंसा करते हुए महाकवि श्री हर्ष ने यहाँ तक कह दिया है कि भारतभूमि व स्वर्गभूमि में ठीक वैसा ही अन्तर है, जैसा शर्करा और सिरका में होता है।

वर्षेषु यद्भारतमार्यधुर्या स्तुवन्ति गार्हस्थय निवाश्रमेषु।
तत्रास्मि पत्युर्वरिवस्ययेह शर्मोर्मिकिर्मीरित धर्मः लिप्सुः।।
स्वर्गे सतां शर्म परं न धर्मा भवन्ति भूमविह तच्च ते च।
शक्या मखेनापि मुदोअमराणां कथं विहाय त्रय मेकमीहे।।
साधोरपि स्वः खलु गामिताधो गमीस तु स्वर्गमित प्रयाणे।
इत्यायति चिन्तयतो हदि द्वे द्वयारूदर्कः किमु शर्करे न।।
प्रक्षीण एवायुषि कर्मकृष्टे नरान्न तिष्ठत्यु पतिष्ठते यः।
बुभुक्षते नाकमपथ्यकल्पं धीरस्त मापातसुखोन्मुखं कः।। नैषधीयचरित 6 / 97 / 100

RECENT RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES & HUMANITIES
Issue : 1, Year : 4, Apr.-May-Jun. (2017), Pages : 69-73 , ISSN 2348 – 3318
कमलेश कुमार मिश्र
International Refereed & Blind Peer-Reviewed Multidisciplinary Research Journal

मैथिल कोकिल विद्यापति की कृति भूपरिक्रमणम् लोककथा परक है। इस कृति की सर्जना कविवर ने अपने जीवनकाल के किशोरावस्था में ही कर ली थी। आपने अपनी इस कृति में बलराम द्वारा द्रुपद देश, ब्रह्मवर्त, प्रयाग, काशी, सारनाथ, जनकदेश आदि सभी प्रमुख क्षेत्रों के अन्तर्गत आने वाले तीर्थस्थानों की यात्रा करायी है। जिसे पढ़कर हदय में भारतीय भू भागों के प्रति आदरपूर्वक आत्मीयता का भाव जगता है।[8]

हम्मीर काव्य के रचियता श्री नयचन्द्र सूरि हैं। वीररस प्रधान इस महाकाव्य में प्रमुख रूप से चौहान वंशीय रणथम्भौर नरेश श्री हम्मीर देव के अप्रतिम शौर्यप्रताप एवं यशचन्द्रिका का अतीव सजीव तथा मर्मस्पर्शी वर्णन किया गया है। काव्य मे महाकवि ने अपने चरितनायक हम्मीरनिष्ठ देशभक्ति की भरपूर प्रशंसा की है ।

वीरभानूदयकाव्यम् महाकाव्य के प्रणेता श्रीमाधव हैं। यह काव्य भारतीय नरेशों के स्वाभिमान तथा सांस्कृतिक प्रेम से भरपूर है। इसमें भारतीय तीर्थो, देवताओं तथा पुण्य सलिला सरिताओं के प्रति निष्ठा प्रकट की गई है। विदेशी यवन शासकों के समक्ष स्वाभिमान की रक्षा करने का साहस दिया गया है और विदेशियों के शासन को समाप्त करने के सपने भी देखे गये हैं।[9]

20 सर्गों और 1414 पद्यों के महाकाव्य सुर्जनचरितम् के प्रणेता महाकवि चन्द्रशेखर हैं। महाकाव्य के प्रमुख नायक चाहमानवंशीय राव सुर्जन की देशभक्ति के साथ ही दूरदर्शिता भी उल्लेखनीय है। राव सुर्जन ने भी पृथ्वीराज और हम्मीरदेव की तरह भारतद्रोही यवनों और पठानों को परास्त किया था। कवि ने अपने इस काव्य में राष्ट्र के योगक्षेम की भी सामयिक चिन्ता प्रकट की गई है। काव्य में पावन भारतीय तीर्थ स्थानों का अतीव प्रभावशाली वर्णन किया गया है, जिसे पढ़कर अपने राष्ट्र के प्रति आदर का भाव पनप उठता है।[10]

सत्रहवीं शताब्दी में वेंकटाध्वरि नामक दक्षिणात्य कवि द्वारा विश्वगुणादर्शचम्पू: नामक काव्य की रचना की गई। इस काव्य में कवि ने कृशानु और विश्वावसु नामक दो गन्धर्वों की वायुयान द्वारा भारतभूमि की अनवरत यात्रा का वर्णन किया गया है। उन्होने भारतीय संस्कृति और सभ्यता के मूर्तिमान प्रतीकों का संवाद शैली मे अतीव रोचक वर्णन करके लोगों के मन मे अपने समग्र भारत भूमि के प्रति आस्था सुदृढ़ की है। अन्त में कवि ने अपना यह भाव स्पष्ट कर दिया है कि लोगों को चाहिए कि इस कृति में वर्णित भारतभूमि को कुशानु की दृष्टि से न देखें इसकी निन्दा व उपेक्षा न करें, बल्कि सहृदयतापूर्वक इसे विश्वावसु के दृष्टिकोण से देखें और इसका हृदय से समादर करें।

नानकचन्द्रोदय महाकाव्यम् के रचयिता काशी निवासी पं0 देवराज शर्मा हैं, जो सिक्खों के उदासी सम्प्रदाय के उपासक थे। आदिगुरू श्रीनानक से लेकर गुरू गोविन्द सिंह तक सभी गुरूओं ने भारतीय संस्कृति का प्रचार–प्रसार, सम्मान एवं संरक्षण करते हुए अपने राष्ट्र के बर्बर आक्रान्ताओं का बड़ी ही धीरता और वीरता के साथ मुकाबला किया है तथा भारतीय जनता ने एकता का सूत्रपात किया है। फलस्वरूप उसके मस्तिष्क मे यह विचार भी बनने लगता है कि यह महाकाव्य धार्मिक और दार्शनिक दृष्टि से नहीं अपितु राष्ट्रीय चेतना की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।

बालमार्तण्डविजयम् नामक नाटक में 5 अंक हैं तथा इसके रचयिता दक्षिणात्य विद्वान श्री देवराज शास्त्री हैं। नाटकानुसार हरिभक्ति अर्थात धर्म के बिना राजसत्ता अनर्थकारिणी हो जाती है। अतः प्रजापालन के लिए तथा राज्य के विकास के लिए राजा को धर्मनिष्ठ होना चाहिए। नाटककार ने भरत वाक्य में भी राष्ट्र कल्याणकारिणी कामना की है कि राज्य में सुवृष्टि हो, धरिनी सस्यसम्पन्ना हो, राजा अपनी धार्मिक मर्यादा का पालन करें। गौऐं परिपुष्ठ हों, ब्राह्मणों का पोषण हो और सत्साहित्य की सर्जना करने वाले उद्गाता कविजन राजसम्मान पाते हुए सुखी रहें। फलस्वरूप कहा जा सकता है कि देवराज शास्त्री अपने मनोमस्तिष्क में राज्य–कल्याण की भावना रखते थे।[11]

प्राचीन संस्कृत साहित्य के अतिरिक्त अर्वाचीन संस्कृत साहित्य की एक लम्बी परम्परा है जिसमें राष्ट्रीय चेतना की भावना मिलती है। इस तरह की साहित्यिक पुस्तकों में श्री अम्बिकादत्त व्यास कृत शिवराजविजयः, श्री अखिलानन्द शर्मा कृत दयानन्द दिग्विजयम् श्री पादशास्त्री हसूरकर कृत पृथ्वीराज चह्वाण चरितम्, पं0 गंगा प्रसाद उपाध्याय कृत आर्योदयम् श्री मूलशंकर मणिकलाल याज्ञनिक कृत प्रतापविजयः छत्रपति साम्राज्यम् पण्डिता क्षमाराव कृत सत्याग्रहगीता उत्तरसत्याग्रहगीता, शंकरजीवनाख्यानम्, श्री हरिनन्दन भट्ट कृत सम्राटचरितम श्रीनिवास शास्त्री कृत चन्दमहीपति, पं0 मथुराप्रसाद शास्त्री कृत वीरप्रतापनाटकम् वीरपृथ्वीराज विजयम् नाटकम् गान्धीविजय नाटकम्, श्री नारायणपति त्रिपाठी कृत श्रीभारतभातृमाला, श्री पंचानन तर्करत्न कृत अमरमंगलम् श्री हरिदास सिद्धान्तवागीश कृत वंगीयप्रतापम् मेवाड़प्रतापम् शिवाजीचरितम्, ब्रह्मश्रीकपाली शास्त्री कृत भारतीस्तवः, श्री निवास ताड़ीपनीकर कृत गांधीगीता, श्री बालकृष्ण भट्ट कृतं कनकवंशः स्वतन्त्रभारतम् आदि सर्वप्रमुख हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शुभलक्ष्मी–आधुनिक हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय चेतना पृ0 10

RECENT RESEARCHES IN SOCIAL SCIENCES & HUMANITIES
Issue : 1, Year : 4, Apr.-May-Jun. (2017), Pages : 69-73 , ISSN 2348 – 3318

2. शुभलक्ष्मी–आधुनिक हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय चेतना पृ0 11
3. डॉ0 मधुमुकुल चतुर्वेदी–राष्ट्र एवं राष्ट्रवाद, पृ0 96
4. हरिनारायण दीक्षित–संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना पृ0 103
5. रघुवंश – चतुर्थ संर्ग 4 / 20–79
6. भट्टिकाव्यम् 16 / 1–34 भट्टि
7. हरिनारायण दीक्षित–संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना पृ0 114
8. विद्यापति– भूपरिक्रमणम् पृ0 01
9. डॉ0 राजीव लोचन अग्निहोत्री–बघेलखण्ड के संस्कृत काव्य पृ0 100–114
10. हरिनारायण दीक्षित–संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना पृ0 119
11. देवराज शास्त्री – बालमार्ताण्डविजयम् 1 / 20–22